ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-5* Issue-6* September-2020
Anthology : The Research

शास्त्रीय संगीत शिक्षा–पद्धति
Classical Music Education

Paper Submission: 15/09/2020, Date of Acceptance: 26/09/2020, Date of Publication: 27/09/2020

काजल शर्मा
असिस्टेन्ट प्रोफेसर,
संगीत वादन विभाग,
आचार्य नरेन्द्र देव नगर निगम
महिला महाविद्यालय, कानपुर,
उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

शिक्षा मानव के सम्यक् विकास का आधार है। संगीत को पाँच ललित कलाओं में अग्रणी माना गया है। प्राचीन काल से ही संगीत की सैद्धान्तिक व व्यवहारिक शिक्षा गुरूकुल पद्धति के द्वारा दी जाती थी। परन्तु मध्य युग में विदेशी आक्रमणों के प्रभाव से विदेशी संस्कृति का प्रभाव भारतीय संस्कृति व संगीत पर पड़ने लगा। संगीत शिक्षा घरानों में सिमट गयी। घराना पद्धति में प्रत्येक घराने की अपनी विशिष्टता होती थी। परन्तु इस पद्धति ने एक संकीर्ण मानसिकता को जन्म दिया। जन सामान्य के लिये संगीत शिक्षा ग्रहण करना दुर्लभ था।

ब्रिटिश काल में तथा स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात संगीत शिक्षा में युगान्तकारी परिवर्तन आया। महाविद्यालयों व विश्वविद्यालयों, में संगीत को एक विषय के रूप में मान्यता मिली। संगीत शिक्षा सभी के लिये बिना किसी भेदभाव के सुलभ हुई। भारतीय शास्त्रीय संगीत नियम और सिद्धान्तों से युक्त है। परन्तु विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में जो पाठ्यक्रम निर्धारित हैं वह समय की माँग के अनुसार नही है। विद्यार्थियों को कम समय में अधिक पाठ्यक्रम के अनुसार संगीत शिक्षा लेनी होती है। अतः शिक्षा पद्धति ऐसी होनी चाहिये जो संगीत शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति करे। आज संगीत शिक्षा के लिये विद्यार्थी के समक्ष नवीन पद्धतियाँ हैं। गुरूकुल पद्धति सदैव ही एक उत्तम पद्धति मानी गई है। विद्यालयी व महाविद्यालयी शिक्षा पद्धति, संगीत के संस्थाओं द्वारा शिक्षण पद्धति, विभिन्न संचार माध्यमों द्वारा संगीत शिक्षण सामाजिक विषमता को दूर करने में महाविद्यालयी शिक्षा पद्धति उत्तम है।

आज के युवाओं को अपनी सांस्कृतिक विरासत सौंपनें का एक सशक्त माध्यम है संगीत शिक्षा। संगीत शिक्षा का अर्थ केवल स्वर, तालयुक्त धुनों या रागों को सिखाना नही है। वरन् उसे संगीत के उचित विकास को दृष्टिगत् रखते हुए वैज्ञानिक युग में भी अपनी सांस्कृतिक धरोहर को सहेज कर रखना है।

Education is the basis of the total development of human beings. Music has been considered a pioneer in five fine arts. Since ancient times, the theoretical and practical education of music was given through the Gurukul system. But due to the influence of foreign invasions in the Middle Ages, the influence of foreign culture began to affect Indian culture and music. Music education was confined to the gharanas. Each gharana had its own specialty in gharana method. But this method gave rise to a narrow mindset. It was rare for the general public to take music education.

Music education underwent an epoch-making change during the British era and after attaining independence. Music was recognized as a subject in colleges and universities. Music education became accessible to all without any discrimination. Indian classical music is full of rules and principles. But the syllabus prescribed in schools and colleges is not according to the demand of time. Students have to take music education according to more syllabus in less time. Therefore, education should be such that it fulfills the objectives of music education. Today students have new methods for music education. The Gurukul system has always been considered a good method. School and college education method, teaching method by institutions of music, music teaching through various media, college education system is excellent in removing social inequality.

Music education is a powerful means of handing over its cultural heritage to today's youth. Music education is not just about teaching vocals, rhythmic melodies or ragas. But he has to preserve his cultural heritage even in scientific age keeping in view the proper development of music.

मुख्य शब्द : शास्त्रीय संगीत, ललित कला, स्वर, तान, घराना, अलंकार, गत, आरोह–अवरोह, स्वरलिपि, ध्रुवपद, ताल, राग, मन्द्र साधना।

Classical Music, Fine Arts, Swara, Tana, Gharana, Alankar, Gat, Aaroha-Avaroh, Swarlapi, Dhruvapada, Taal, Raga, Mandra Sadhana.

प्रस्तावना

ज्ञान, विद्या, अभ्यास व अनुभव से युक्त वह प्रक्रिया जिसके माध्यम से योग्य व्यक्ति अयोग्य व्यक्ति की वृत्तियों को परिष्कृत करता है, शिक्षा कहलाती है। शैक्षणिक प्रक्रिया मानव के अपने व्यक्तित्व का संतुलन बनाये रखने की योग्यता उत्पन्न कर उसे सभ्य, सुसंस्कृत, सुयोग्य एवं सहृदय बनाती है। शिक्षा मानव के सम्यक विकास का आधार है। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य मानव का सर्वांगीण विकास करना है। ललित कलाओं की शिक्षा आध्यात्मिक विकास की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण है। सामान्य शिक्षा तथा ललित कलाओं की शिक्षा, दोनो का समावेश मानव चिन्तन, तर्क तथा समस्याओं के समाधान करने की कुशलता से युक्त होने पर जीवन दर्शन व जीवन मूल्यों से परिचित होकर स्वयं अपने व समाज के लिये उपयोगी सिद्ध होता है। वैदिक साहित्य में मानव कृतित्व से सम्पन्न होने वाली प्रत्येक रचना को कला कहा गया है व चौंसठ कलाओं का निर्देश दिया गया है। परन्तु यह सभी रसोत्पत्ति में सक्षम नही हैं। इस दृष्टि से पॉच कलाओं को विशेष मानकर उन्हे ललित कलाएं कहा गया व शेष को उपयोगी कलाएं माना गया जिससे मानव भैतिक आवश्यक्ताओं की पूर्ति करता है। ललित कलाओं में लालित्य होने के कारण इन्हें ललित कला कहा गया। संगीत को पाँचों ललित कलाओं में अग्रणी माना गया है।1

मध्य युग में विदेशी आक्रमणों और विदेशी संस्कृति के प्रभाव के कारण संप्रदायगत संगीत शिक्षा का लोप होने लगा। ''मुस्लमानों के आक्रमण और शासन के पश्चात शुद्ध रूप से हिन्दू कहलाने वाली सभी भारतीय कलाओं पर यवन संस्कृति का का प्रभाव पड़ना आरम्भ हो गया।''[1] संगीत दरबारों की शोभा बढ़ाने लगा। योग्यता का आधार कला व कौशल की श्रेष्ठता बन गया। संगीत शिक्षा घरानों में सिमट गयी। हर घराने की अपनी विशिष्टता थी। स्वर लगाव, प्रस्तुतिकरण, तानों की प्रस्तुति आदि का ढ़ग उनकी अपनी विशिष्टता थी। बीसवीं शताब्दी में दो महान विभूतियों पं0 विष्णुनारायण भातखण्डे तथा पं0 विष्णु दिगम्बर पलुष्कर जी ने संगीत जगत को एक नई दिशा प्रदान की। संगीत के प्रचार–प्रसार के लिए ग्वालियर, लखनऊ एवं बड़ौदा आदि नगरों में संगीत महाविद्यालयों की स्थापना की।

''संगीत शिक्षण संस्थाओं का प्रारम्भ ब्रिटिश काल में सर्वप्रथम कलकत्ते में श्री क्षेत्र मोहन गोस्वामी के द्वारा हुआ। तत्पश्चात भारतीय शिक्षा मंत्रालय एवं कोठारी कमीशन के फलस्वरूप विश्वविद्यालयों में उच्च स्तरीय विषय के रूप में संगीत को जोड़ा गया।''[2]

आज संगीत सभी के लिये सरलता से उपलब्ध है। परन्तु उसकी गूढ़ता व बारीकियों को समझ पाना कठिन हो गया है। क्या संगीत शिक्षा का उद्देश्य मानव जीवन में रस संचार कर संगीत का ज्ञान देना है या उसे जीवन में मानसिक, सामाजिक, आर्थिक व नैतिक रूप से आत्म निर्भर व उत्कृष्ट बनाना भी है। किसी भी कला की रचना किसी न किसी माध्यम से होती है। संगीत कला का माध्यम स्वर, लय और ताल है। प्राचीन समय में शिक्षा गुरू–शिष्य परम्परा द्वारा दी जाती थी। प्राचीन शिक्षा पद्धति में शिक्षा केवल गुरू के नेतृत्व में सुचारू रूप से चलती थी। गुरू और गुरूकुल ही शिक्षा के केन्द्र थे। शिक्षा मूलतः मौखिक रूप से ही दी जाती थी। गुरू और शिष्य के मध्य आदर, श्रद्धा व प्रेम की भावना रहती थी।

संगीत शिक्षण के लिए नई पद्धतियॉ विकसित हो रही हैं। इन शिक्षा पद्धतियों को लेकर कई प्रश्न उत्पन्न हो रहे हैं। क्या शिक्षार्थियों को सीधे गत सिखायें या पहले आरोह–अवरोह सिखाने चाहिए? पहले अलंकारों का अभ्यास करायें या पहले उन्हे रागों के बारे में बतायें। परीक्षा पाठयक्रम के अनुसार सिखायें तो कम समय में ही सब कुछ उन्हे सिखाना होगा क्योंकि पाठयक्रम ही इतना ज्यादा है और समय बहुत कम। आज तो शिक्षार्थी बी0ए0 में प्रवेश लेता है, उसे न तो स्वरों का ज्ञान है न ही ताल का, फिर कैसे पाठ्यक्रम पूरा करायें। संगीत का उद्देश्य संगीत को जटिल करना नही हैं। अपितु उसे आसान व रूचिकर बनाना है। विभिन्न महाविद्यालयों व विश्वविद्यालयों के पाठयक्रम आज की मॉग के अनुसार नही है। कहने का तात्पर्य यह है कि विद्यालयों व महाविद्यालयों में संगीत के अतिरिक्त विद्यार्थी को अन्य विषयों की ओर ध्यान देना होता है। शिक्षार्थी की मानसिकता कम समय में अधिक प्राप्त करने की हो गई है। उसमें इतना धैर्य नही है कि वह घंटों एक ही चीज का अभ्यास करे। वह जल्दी से जल्दी संगीत सीखना चाहता है। पहले प्रातः जल्दी उठकर मंद्रसाधना की जाती थी। फलस्वरूप शिक्षार्थी की आवाज तैयार हो जाती थी तथा स्वरों का ज्ञान ब्रह्ममुहूर्त में बहुत अच्छे से हो जाता था। आज तो स्मार्ट फोन का समय है। नई पीढ़ी को सुबह जल्दी उठने की आदत नही है। आज व्यक्ति के पास समय का अभाव है। उसके पास न हंसने के लिये समय है न रोने के लिए। फिर शास्त्रीय संगीत तो बहुत ही धैर्य व साधना माँगता है।

भारत में शास्त्रीय संगीत शिक्षा में सबसे मुख्य विशेषता यह मानी गई है कि इसमें नियमों और सिद्धान्तों पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाता है। प्राचीनकाल से ही शास्त्रीय संगीत के सिद्धान्त व नियम बनते रहे हैं। ध्रुवपदगायन शैली में बिना गुरू ज्ञान के शिक्षण संभव नही है क्योंकि स्वर साधना के बाद ध्रुपद गायन शिक्षा देने से स्वरों में गम्भीरता, मधुरता, रसभाव एवं आकर्षण उत्पन्न सम्भव माना गया है।

आधुनिक शास्त्रीय संगीत में शिक्षा में तानों और आलापों पर ही विशेष बल दिया जाता है और गीत व शब्दों पर गायक कम ध्यान व महत्व देते हैं। वर्तमान समय में हमें शास्त्रीय संगीत शिक्षा का स्तंभ ऐसा निर्मित करना चाहिये जिसमें गुरू शिष्य परम्परा का भी समन्वय हो सके तथा गुरू मुख से भी ज्ञान प्राप्त कर सके तथा स्वरलिपि पद्धतियों द्वारा भी शिक्षा का विधिवत पालन किया जाये जिससे कि दोनो पद्धतियों के गुणों का मिश्रण हो सके।[3]

भारत में वैदिक काल से ही संगीत की एक विशिष्ट परम्परा रही है। लंबे समय तक भारत में संगीत शिक्षा के लिये गुरू–शिष्य परम्परा या गुरूकुल पद्धति

प्रचलित रही। ऐतिहासिक रूप से भारतीय संगीत के इतिहास को चार कालों में बॉट सकते हैं। ये चार काल हैं–वैदिक युग, नाट्यशास्त्र का युग, मध्ययुग और आधुनिक युग। परन्तु गुरू–शिष्य परम्परा हमें सभी कालों में दृष्टिगोचर होती है। संगीत शिक्षण पद्धति के रूप में पॉच पद्धतियॉ प्रचलित हैं।

1. गुरूकुल पद्धति
2. विद्यालय पद्धति
3. संस्थागत विद्यालयों में संगीत शिक्षण
4. एक व्यक्ति का दूसरे को संगीत शिक्षण
5. विभिन्न संचार माध्यमों से संगीत शिक्षण

गुरूकुल पद्धति में शिष्य को बारह वर्ष तक गुरू के आश्रम में रहकर ज्ञान प्राप्त करना होता था। सभी शिष्य चाहे वह राजकुमार हो या साधरण व्यक्ति एक साथ रहकर शिक्षण प्राप्त करते थे। संगीत प्रयोगात्मक रूप से ही सिखाया जाता था। लिखित व स्वरलिपि में संगीत शिक्षा नहीं दी जाती थी। गुरू के द्वारा ज्ञान शिष्य को प्रायोगिक रूप से स्थानान्तरित किया जाता था। यही पद्धति मध्ययुग तक प्रचलन में रही परन्तु मध्ययुग में मुसलमानों के आगमन से संगीत प्रभावित हुआ। गुरूकुल परम्परा को एक हिन्दु परम्परा मानकर विदेशी बादशाहों ने इसको नष्ट करना प्रारम्भ कर दिया। मध्यकाल में शासकों के लिये संगीत मात्र मनोरंजन का साधन रह गया। ब्रिटिश काल में भी संगीत शिक्षण के लिये कोई विशेष कार्य नही किया गया और गुरूकुल परम्परा के अवशेष ही रह गये।

''स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात देश में संगीत की व्यापक प्रगति हुई तथा संगीत के शास्त्रीय एवं व्यवहारिक दोनों पक्षों में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के द्वारा खुले। विद्यालयों, महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में संगीत को समुचित महत्व तथा स्थान मिला एवं संगीत को केवल एक ललित कला ही नही अपितु विषय के रूप में मान्यता प्राप्त हुई।''[4] आज देश के लगभग सभी विश्वविद्यालयों में विद्यार्थियों को स्नातक, परास्नातक तथा डॉक्टरेट उपाधि प्रदान की जा रही है।

कुछ ब्रिटिश शासकों के प्रयास से व शिक्षा के अधिकार के प्रभाव से संगीत विद्यालयों की स्थापना कर संगीत शिक्षण पद्वति में क्रान्तिकारी परिवर्तन आया। जिसका श्रेय पं0 विष्णुदिगम्बर पलुष्कर व पं0 विष्णुनारायण भातखण्डे को जाता है। संगीत के युग प्रर्वतक के रूप में मान्य पं0 विष्णुनारायण भातखण्डे जी ने उत्तर भारतीय संगीत के क्रियाम्तक व शास्त्रीय दोनों पक्षों में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन किये पं0 भातखण्डे तथा पं0 विष्णु दिगम्बर पलुष्कर जी ने संगीत के प्रचार–प्रसार में कड़ी मेहनत कर ग्वालियर, लखनऊ एवं बड़ौदा आदि नगरों में संगीत महाविद्यालयों की स्थापना की। संगीत विद्यालय व महाविद्यालय खुलने से संगीत जनसामान्य के लिये सुलभ हुआ। प्रयाग संगीत समिति, चंडीगढ़ की प्राचीन कला केन्द्र, मिरज की अखिल भारतीय गान्धर्व महाविद्यालय मण्डल आदि संस्थाएं संगीत में उच्चस्तरीय शिक्षा व विभिन्न उपाधियाँ प्रदान कर रही हैं।

संगीत शिक्षण पद्धति के अन्तर्गत एक शिक्षक या गुरू एक शिष्य या छात्र को अनौपचारिक रूप से संगीत सिखाता है। यह एक मुक्त पद्धति है। इसमें विभिन्न संचार माध्यम (मीडिया) से भी अनौपचारिक रूप से संगीत शिक्षा ली जा सकती है। संगीत शिक्षा के क्षेत्र में गुरू–शिष्य परम्परा की प्रक्रिया में महाविद्यालयीन सामुहिक संगीत शिक्षा की अभिनव पद्धति परिस्थिति जन्य निर्मित हुई। शास्त्रीय संगीत की शिक्षा को इस पद्धति के माध्यम से लोक व्यापक बनाने में अधिक सहायता मिली है।

आधुनिक समय में विभिन्न संचार माध्यम संगीत शिक्षण में अहम भूमिका निभा रहे हैं। प्रतिष्ठित गायकों तथा वादकों की रिकॉर्डिंग्स सुनकर विद्यार्थी उनकी कला कुशलता की बारिकियाँ सीख सकते हैं। संगीत के अखिल भारतीय कार्यक्रम आकाशवाणी से प्रसारित किये जाते हैं। टी0वी0, कैसेट्स, सी0डी0 आदि के माध्यम से संगीत शिक्षण को और अधिक प्रभावशाली बनाया जा सकता है। मोबाइल फोन के बढ़ते प्रयोग ने इसे जन सामान्य के लिये अत्यधिक सुलभ बना दिया है। यू–ट्यूब, गूगल आदि पर संगीत शिक्षा के लिए मन वांछित सामग्री उपलब्ध है। बदलते समय ने विभिन्न वाद्यों को भी इलेक्ट्रानिक रूप प्रदान किया है। अब मोबाइल फोन में ही विभिन्न एप्स डाउनलोड कर विद्यार्थी तबला, तानपुरा आदि की संगत प्राप्त कर सकता है।

अध्ययन का उद्देश्य

आधुनिक समय में विद्याथियों के लिए संगीत शिक्षा के अध्ययन का उद्देश्य उनका मानसिक व आध्यात्मिक विकास करना है। संगीत शिक्षा के अध्ययन का उद्देश्य संगीत को जटिल करना नही है वरन उसे सरल व रूचिकर बनाना है। सामान्य शिक्षा तथा ललित कलाओं की शिक्षा, दोनो का समावेश मानव चिन्तन, तर्क तथा समस्याओं के समाधान करने की कुशलता से युक्त होने पर जीवन दर्शन व जीवन मूल्यों से परिचित होकर स्वयं अपने व समाज के लिए उपयोगी सिद्ध होता है।

निष्कर्ष

संगीत शिक्षा सामुदायिक जीवन के निर्माण में सहायक है। संपूर्ण भारत का संगीत सप्त–स्वरों में आबद्ध है, चाहे उत्तर भारतीय संगीत पद्धति हो या दक्षिण भारतीय संगीत पद्धति हो। सामाजिक विषमता को दूर करने में महाविद्यालयी संगीत शिक्षा पद्धति उपयोगी है। सामाजिक चेतना को जगाने में अन्य कलाकारों की अपेक्षा संगीतकारों की चेतना महत्वपूर्ण है। अतः संगीत–शिक्षा का प्रधान लक्ष्य आध्यात्मिक है। इसी आध्यात्म के बल पर मानव मुक्ति को प्राप्त करता है। संगीत शिक्षा ऐसी शिक्षा है जिसके द्वारा मानव अपने जीवन के प्रत्येक पहलू को सॅवार सकता है। अतः निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि शास्त्रीय संगीत को दोष रहित बनाकर उसकी शिक्षा पद्धति में आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर देने से भारतीय संगीत को लुप्त होने से बचाया जा सकता है। जिसकी जिम्मेदारी विद्यार्थियों पर नहीं बल्कि शिक्षक और समाज पर है। संगीत शिक्षा पद्धति ऐसी होनी चाहिये कि वह शिक्षार्थी का सर्वांगीण विकास करे। ''इसके लिये पाँच मुख्य क्षेत्र हो सकते हैं–1. सामुहिक संगीत में प्रयोग की क्षमता पैदा करना, 2. एकल गायन अथवा वादन की योग्यता पैदा करना, 3. अच्छे संगीत शिक्षक बनाना, 4.

अनुसंधानकर्ता तैसार करना, 5. संगीत के विवेक युक्त श्रवण तथा समीक्षा की योग्यता पैदा करना''[5]

आज के युवाओं को अपनी सांस्कृतिक धरोहर सौंपने का एक सशक्त माध्यम है संगीत–शिक्षा। संगीत–शिक्षा का अर्थ केवल स्वर, तालयुक्त धुनों या रागों को सिखाना मात्र नहीं है वरन संगीत के साधना पक्ष में विद्यार्थी की श्रद्धा व आस्था उत्पन्न करना, संगीत के प्रयोगों के प्रति विशाल दृष्टिकोण अपनाते हुए भी उसके रस्तत्व के प्रति सचेत रहना तथा संगीत के उचित विकास के लिये प्रयत्नशील रहना, वैज्ञानिक प्रगति के युग में वैज्ञानिक संयन्त्रों का आश्रय लेते हुए तथा संगीत के मनोवैज्ञानिक प्रयोगों एव वैज्ञानिक विचारशीलता को अपनाते हुए भी उसके सांस्कृतिक महत्व की उपेक्षा न करना भी है।

प0 रवीन्द्रनाथ टैगोर ने कहा था कि ''भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिये संगीत तथा अन्य ललित कलाएँ जीवन में बड़ा महत्व रखती हैं। अचेतन की सम्पूर्ण अभिव्यक्ति इन्ही के माध्यम से होती है, अतः इनकी शिक्षा को किसी भी कीमत पर विस्मृत व विकृत नही किया जाना चाहिए''[6]

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *मिस्त्री डॉ आवान ए–पखावज घराने एवं परम्परायें सस्करण 1984 पृ0 4*
2. *डॉ स्वतन्त्र शर्मा, संगीत मासिक–मार्च 2003 पृष्ठ 50*
3. *डॉ रानी अनीता, भैरवीः संगीत शोध पत्रिका वर्ष 2012 पृ0 49*
4. *माननहेलिया शिवानी –संगीत मासिक–नवम्बर 2002, संगीत की उच्चशिक्षा का वर्तमान स्वरूप पृष्ठ 51*
5. *कु0 रावत निशा, संगीत मासिक सितम्बर 2004 पृ0 44*
6. *डॉ रानी अनीता, भैरवीः संगीत शोध पत्रिका वर्ष 2012 पृ0 50*
7. *संगीत शिक्षा : अंक जनवरी फरवरी – 1988*
8. *पत्र एवं पत्रिकाएं*
9. *गूगल*